B-3

॥ श्रीः ॥

काशीनिवासिश्रीपतिविदुषा विरचितः

त त्त्व प्र दी पः ।

ढाढौलिग्रामस्थपण्डितवर्यपाठकान्वयावतीर्णमंगल-
सेनात्मजकाशिरामविरचितया तत्त्वप्र-
दीपिकाख्यभाषाटीकया सहितः ।

सोयं

श्रीकृष्णदासात्मज-गंगाविष्णुना
स्वकीय "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" मुद्रणालये
मुद्रयित्वा प्राकाश्यं नीतः ।

संवत् १९५५, शके १८२०.

कल्याण-मुंबई.

इस पुस्तकका रजिष्टरी सब हक्क १८६७ के ऍक्ट २५
बमुजब यन्त्राधिकारीने अपने स्वाधीन रक्खा है.

नूतन पुस्तकोंकी जाहिरात

घटकर्परकाव्य भा० टी०	...	...	०-३
अश्व टी काव्य भा० टी०...		...	०-४
बृहत्से मंजरी भा० टी०	...	...	०-१०
नासि कृत भा० टी० ...	...	...	०-८
भागव त मूल बडा खुलापत्रा	..	...	५-०
लघुसि द्धांत कौमुदी भा० टी०...		...	२-०
संवत्सरफलदीपिका (भाषा) ...		...	०-३
मासी चंतामणि भाषाटीका	...	...	०-३
स्वरत लसमूह (सितारका पुस्तक)		....	१-८
ासि कृत भाषा (वार्तिक) ...		...	०-५
त्व धि भाषाटीका ...	...	...	०-२॥
तुत्रन पिंक भाषाटीका और संस्कृत टीका		...	०-८
त्व विवा विचार भाषा ...	...	...	०-२
चौत कचंद्रिका	... ...	...	०-४
ल पूरनमलभक्तका सांगीत....		...	१-४
रचनेकी इच्छा ख्याल.	...	...	०-४

निवेदन.

लीजिये ! आज मैं सहर्ष अपने प्रिय भ्रातृगणोंको
अद्भुत संदेशसे सूचित करता हूं जो कि तत्त्वप्रदीप ग्रंथ
कोंमें अतीव मनोहर जन्मपत्रके फल कहनेका चमत्कृत
सा जातक है जिसमें सर्वजातकोंका सारांश सर्वस्व सू
तिसे दर्शा दिया है और युगानुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय,
शूद्र, अंत्यज, म्लेच्छजनोंके सौभाग्य तथा पृथक् २
गोंसे परिपूरित ह. इसी कारण मैंने बडे श्रमव्यय.
ढाढौलिग्रामस्थ पण्डित पाठक काशिरामद्वारा कई
पुस्तकोंसे संशोधित तथा सरल भाषानुवादसे विभूषित
सुन्दर टैप और ग्लेज कागजोंपर मुद्रित कराया है. इ
बडे आनन्दके साथ सर्व विद्वान् तथा हिन्दीरसिक आब
पर्यन्तोंकी परिचर्य्यामें अल्पही मूल्य होनेसे अर्पण करना
हूं ग्राहक महाशय निम्नलिखित पतेपर पत्र भेजकर मँगा दे

आपका—

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापाखाना,

कल्याण—

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

भाषाटीकासमेतः

तत्त्वप्रदीपः ।

कस्तूरीकोशभासः कमलदलदृशः कौस्तु-
भांकः कृपालुः कालिन्दीकूलकेलिः कुलि-
करनुतः कामिनीकंठमालः ॥ कंसारिः
टभारिः कलिमलकदनः कौणपानां करालः
रूपस्थाणुः कवीनां कलयतु कुशलं केशवः
शिकालः ॥ १ ॥

वा देवं महेशानं ध्यात्वाचार्यपदाम्बुजम् ।
वप्रदीपे विदधे भाषां तत्त्वप्रदीपिकाम् ॥

र्थ—ग्रंथकर्त्ता ग्रंथकी निर्विघ्नसमाप्तिके लिये ग्रंथके भमें मंगलाचरण रचते हैं. क्योंकि शिष्टजनोंकी यही ... है. इसी कारण श्रीपति महाराज तत्त्वप्रदीप ग्रंथके नेकी इच्छावाले हुए अपने इष्टदेव श्रीकृष्णसे मंगलप्रा-

र्थना कर तच्चरणप्रणामपूर्वक ग्रंथकी रचना संकल्प
हैं दो श्लोकोंकर। केशीदैत्यके कालरूप केशव जो
महाराज हमारे कुशल नाम कल्याणको रचें. कैसे
श्रीकृष्ण महाराज कि जिनकी शोभा कस्तूरीके कं
मुकुलकी समान है और जिनकी दृष्टि कमलपत्रके
कोमल है और जिनके हृदयमें कौस्तुभमणि
मान है और जो कृपालु अर्थात् ध्यानमात्रसेही
परिपूरित हो भक्तोंकी रक्षा करते हैं और जिन्होंने क
नाम यमुनाके तीरपर नाना प्रकारकी क्रीडा की हैं
कुलिशकरनुत अर्थात् कुलिश नाम वज्र है कर नामत
जिसके ऐसे इंद्रने अपने मदके नाश होनेपर स्तुति किए
और जो कामिनी गोपिकाओंके रासक्रीडामें कंठकी
होते हुए और जो कंसके शत्रु तथा कैटभदैत्यके
और जो कलिके पापोंके नामके उच्चारणमात्रसेही
करनेवाले हैं और जो कौणप नाम राक्षसोंके भय दे
हैं और जो कवियोंके मनोरथ पूरे करनेके लिये
वृक्ष हैं ॥ १ ॥

नत्वा कृष्णांघ्रियुग्मं परमपदप्रदं रम्यराजी-
वरूपम् विश्वोत्पत्त्येकबीजं भवभयहरणं
कामधेनुं कृपालुम् ॥ काशीस्था गौडविप्रा
हरिरसकवयः सेवकाः सज्जनानाम् कुर्मः
सिद्धान्तसारं मुनिमनुजमतं तत्त्वपंचाशि-
कीयम् ॥ २ ॥

अर्थ—परमपदके देनेवाले, सुन्दर कमलरूप, विश्व नाम संसारकी उत्पत्तिमें एकही बीज, संसारके भय हरनेवाले, ामधेनु, कृपासंपन्न ऐसे श्रीकृष्णके चरणद्वयको प्रणाम कर ः नाम श्रीकृष्णके गुणानुवादरूप रसके जाननेमें विद्वान्, ानमहात्माओंके सेवक ऐसे काशीपुरीमें स्थिति करनेवाले ः ब्राह्मण हम श्रीपति सिद्धान्तोंका सार मुनिजनोंके संमत त्वपंचाशिकीय नाम जातकको प्रबन्धरूपसे करते हैं॥२॥

थम द्वादश भावोंका शुभ अशुभ लक्षण कहते हैं ।

ो भावः स्वामिदृष्टो निजपतिसहितः सौ-
म्ययुक्तेक्षितो वा ज्ञेया तस्य प्रवृद्धिर्दशि

युति निभृतं यद् गृहं कुग्रहाणाम्॥ हानिस्त-
स्यानुमेया विहितशिवफलाः केंद्रकोणाय-
रैस्थाः सौम्याश्चासौम्यखेटा उपचयगृहगा
रन्ध्ररिःफे न कोपि ॥ ३ ॥

अर्थ–प्रथमभावकी तनु, द्वितीयकी धन, तृतीयकी भ्रातृ, चतुर्थकी सुहृत्, पंचमकी सुत, षष्ठकी रिपु, सप्तमकी जाया, अष्टमकी मृत्यु, नवमकी धर्म, दशमकी कर्म, एकादशकी आय, द्वादशकी व्यय संज्ञा है[1]. इन द्वादश

---

१ अवस्था, सुख, दुःख, साहस, रूप, वर्ण जाति इत्यादिक सब प्रथमभावमें देखे और सुवर्णादिक धा मोल लेना, बेचना, धनकी स्थिति, कोश. रत्नादि द्रव्यादिककी प्राप्ति इत्यादिक सब द्वितीयभावमें दे भ्रातृवर्ग, नौकर, दासी, पराक्रम, आलस्य इत्यादिक तृतीयभावमें देखे और गृह, ग्राम, चतुष्पदसुख, म वाटिका उद्यम मित्रादिकोंसे शुभाशुभ इत्यादिक यह सब भावमें देखे और पुत्रादिक, बुद्धि, विद्या, नीति इत्यादिक पंचमभावमें देखे और शत्रु, रोग, चिन्ता, अग्निभय, कुकर्म इत्यादिक यह सब षष्ठभावमें देखे और स्त्री, वणिज

मेंसे जो भाव कि स्वामीने देखा हो वा अपने पतिकरके युक्त हो तौ उसी भावकी अतिवृद्धि जाननी चाहिये. तात्पर्य यह है कि जिस भावके विषैं मेष-वृश्चिकपर मंगल और वृष-तुलापर शुक्र और मिथुन-कन्यापर बुध और कर्कपर चंद्रमा और सिंहपर सूर्य और धनु-मीनपर बृहस्पति और मकर-कुंभपर शनि स्थित हैं वा जिस भावके विषैं

लडाई, वादविवाद, विवाह, धृतविवाहित स्त्रीयोग, त्यादिक यह सब सप्तमभावमें देखे और मृत्यु, बन्धन, छिद्रादिक प्रवेश, दुर्ग, कारागार इत्यादिक यह सब वमें देखे और भाग्य, कुभाग्य, शील, आचरण, धर्म, वडी बगीचा, तडाग, सदावर्त्त, मनन, निदिध्यासन, राण श्रवण, विप्र देव भक्ति इत्यादिक यह सर्व धर्मसंब-र्थ नवमभावमें देखे. पितृसुख, आजीविका, महत्पदप्राप्ति, , कर्मसिद्धि, राज्य तथा राजसन्मान इत्यादिक सब दश-में देखे. हाथी, पालकी, यान, घोडा, वस्त्र, छत्र, सुवर्ण, रत्न और लाभालाभ इत्यादिक सब एकादशभावमें देखे हानि, दान, व्यय, राजदंडादिक इत्यादिक यह सब शभावमें देखे.

इनको देखते हों तौ उस भावकी वृद्धि जाननी. अथवा जो भाव सौम्य ग्रह अर्थात् पूर्णचंद्र, बुध, शुक्र, बृहस्पतिमेंसे किसीसे युक्त वा देखा गया हो तौभी उस भावकी वृद्धि जाननी चाहिये और जो ग्रह कुग्रह अर्थात् कृष्णपंचमीसे लेकर शुक्लपंचमीतकके क्षीण चंद्र और पाप ग्रहोंके साथमें बुध और मंगल शनि इन्होंकी दृष्टि वा योगसे पूर्ण हो उसकी हानि अनुमान करने योग्य है और सौम्य शुभ ग्रह अर्थात् पूर्ण चंद्र, बुध, बृहस्पति, शुक्र यह केंद्र (भावों चतुर्थ, सप्तम, दशम) और कोण (पंचम, नवम), चिन आय (एकादश) और रै (द्वितीय) इन भावोंपर तुओं हुए विहित शिवफल अर्थात् शुभफलके रचनेवाले) खे और असौम्य खेट(पापग्रह)अर्थात् क्षीणचंद्र, सूर्य, यह शनि, पापग्रहयुक्त बुध यह उपचय (तृतीय, दशम, एकादश) भावोंपर स्थित हुए शुभफलके दे होते हैं और रंध्र (अष्टम), रिःफ (द्वादश) इन भा कोईभी शुभफलदायक नहीं होता है ॥ ३ ॥

इसके अन्तर सूर्यादि ग्रहोंका वर्ण रूप तथा जाति स्वामिता एक श्लोककर कहते हैं ।

आरक्तौ भानुभौमौ भृगुजहिमकरौ शुभ्रकौ ज्ञः शुकाभः स्वर्णाभो देवमंत्री रविजविधुरिपू प्रौढनीलांजनाभौ ॥ विप्राधीशौ सितेज्यौ विधुरपि च विशां क्षत्रिणां भानुभौमौ सोमः शूद्रांत्यजानां शनिरपि तमसो[1] म्लेच्छजानामधीशः ॥ ४ ॥

अर्थ—भानु (सूर्य) और भौम (मंगल) यह दोनों विशेष कुछ लाल वर्ण हैं और भृगुज (शुक्र) और हिमकर (चंद्रमा) यह दोनों श्वेतवर्ण हैं और ज्ञ (बुध) सुआके समान कांतिवाला है अर्थात् हरे वर्ण है और देवमंत्री (बृहस्पति)सुवर्णकी कान्तिके समान है अर्थात् पीतवर्ण है और रविज (शनि) और विधुरिपु (राहु) यह दोनों अत्यन्त काले अंजनकी कान्ति सदृश हैं अर्थात् अतीव

---

१ तमःशब्दात्स्वार्थेण् ।

काले वर्ण हैं सित (शुक्र) और इज्य (बृहस्पति) यह दोनों ब्राह्मणोंके स्वामी हैं और विधु (चंद्रमा) वैश्योंका स्वामी है और सौम्य (बुध) शूद्र अंत्यजोंका स्वामी है और शनि तथा तमस (राहु) यह दोनों म्लेच्छजनोंके स्वामी हैं ॥ ४ ॥

इसके अनन्तर युग जातिके अनुसार ग्रहोंका शुभफल कहते हैं एक श्लोककर ।

सत्ये देवेज्यशुक्रौ सकलफलप्रदौ ब्राह्मणानां प्रसूतौ त्रेतायां भानुभौमौ कथितफल[illegible]रौ क्षत्रिणां जन्मकाले ॥ वैश्यानां प्रौढचन्द्रो विमलफलप्रदो द्वापरे शूद्रजानां ज्ञः शनैतो भानुजाद्याः कलियुगफलदाः सर्वदा म्लेच्छजानाम् ॥ ५ ॥

अर्थ—सत्ययुगमें ब्राह्मणोंके जन्मसमय बली होकर देवेज्य(बृहस्पति)और शुक्र यह दोनों ब्राह्मणोंको सम[illegible] शुभ फल देनेवाले हैं और त्रेतायुगमें क्षत्रियोंके जन्मसमय बली

होकर क्षत्रियोंको भानु (सूर्य) और भौम (मंगल) यह दोनों जातकोक्त शुभ फलके पूर्ण रीतिसे करनेवाले हैं और द्वापरयुगके विषैं वैश्योंको चंद्रमा बली होकर निर्मल फल देनेवाला है और ज्ञ (बुध) शूद्रोंको शुभ है और भानुज (शनि) और आदि शब्दसे राहु केतु यह तीनों म्लेच्छजनोंको सदैवही कलियुगमें फल देनेवाले हैं भाव यह है कि सत्ययुगमें तौ ब्राह्मणोंके लिये बली होकर बृहस्पति शुक्र शुभ पूर्ण फल देते हैं और त्रेतायुगमें क्षत्रियोंको बली होकर सूर्य मंगल शुभ पूर्ण फल देते हैं और द्वापरमें वैश्योंको बली होकर चंद्रमा और शूद्रोंको बली होकर बुध शुभ पूर्ण फल देता है और कलियुगमें बली होकर म्लेच्छोंको शनि राहु केतु शुभ फल देते हैं ॥ ५ ॥

इसके अनन्तर ग्रहोंका पुरुषस्त्रीनपुंसकस्वरूप एक श्लोकसे कहते हैं ।

भौमार्कज्यास्त्रिखेटा नरवरकथिताः पूर्वग्रन्थेषु धीरैर्नार्य्यौ दैत्येज्यचंद्रौ झटिति फलप्रदौ

योषितां जन्मकाले ॥ क्लीबौ द्वौ सौम्यसौरौ
परमफलकरौ चान्यथा योनिजानां गर्गाद्यैः
पूर्वधीरैः सकलगुणगृहैः कीर्त्तितं पाण्डुपुत्रैः॥

अर्थ–भौम (मंगल) और अर्क (सूर्य) और इ (बृहस्पति) यह तीनों ग्रह पूर्वग्रन्थोंके विषैं विद्वानोंने उत्तम नर कहे हैं और दैत्येज्य (शुक्र) और चंद्रमा यह दोनों स्त्रियोंके जन्मकालमें शीघ्र फलके करनेवाले स्त्रीसंज्ञक हैं और सौम्य (बुध) और सौर (शनि) यह दोनों स्त्रीपुरुषसे अन्यथायोनिसे उत्पन्न होनेवाले नपुंसकोंको परम फलकर्त्ता क्लीब अर्थात् नपुंसक हैं यह समस्त गुणोंके स्थान पूर्वविद्वान् गर्गादिक पाण्डुपुत्रोंने कहा है ॥ ६ ॥

इसके अनन्तर ग्रहोंकी दृष्टिविचारज्ञान कहते हैं।

दृष्टिः काष्ठातृतीये नवमशरगृहे वेदनागे च
द्यूने संजाता पादवृद्ध्या कथितफलकरी
सूर्यशुक्रेन्दुज्ञानाम्॥मंदेज्यक्षोणिभूनां चरण-

द्विचरणं वह्निपादं तथैव पूर्णं पश्यन्ति
भावान् वदति मुनिवरः पूर्वग्रन्थेषु धीरः ॥ ७ ॥

अर्थ–काष्ठा (दशम) और तृतीयभावके विषैं और तथा शर (पंचम) गृहके विषैं और वेद (चतुर्थ) तथा नाग (अष्टम) भावके विषैं और द्यून नाम सप्तम भावके विषैं मंद (शनि) इज्य (बृहस्पति) क्षोणिभू (मंगल) तथा सूर्य शुक्र इन्दु (चंद्रमा) ज्ञ (बुध) इनकी जातकोक्त फलके करनेवाली दृष्टि क्रमसे पादवृद्धि करके प्राप्त हुई जाननी, भाव यह है कि शनि दशम तृतीय भावको पूर्णदृष्टिसे और नवम पंचम भा॰को एक चरणकी दृष्टिसे और चतुर्थ अष्टमभावको दो चरणकी दृष्टिसे और सप्तम भावको तीन चरणकी दृष्टिसे देखता है और बृहस्पति नवम पंचमा भावको पूर्णदृष्टिसे और चतुर्थ अष्टमभावको एक चरणकी दृष्टिसे और सप्तम भावको दो चरणकी दृष्टिसे और दशम तृतीय भावको तीन चरणकी दृष्टिसे देखता है और मंगल चतुर्थ अष्टम भावको पूर्ण दृष्टिसे और

सप्तम भावको एक चरणकी दृष्टिसे और दशम तृतीयको दो चरणकी दृष्टिसे और नवम पंचम भावको तीन चरणकी दृष्टिसे देखता है और सूर्य शुक्र चंद्रमा बुध यह चारों सप्तम भावको पूर्ण दृष्टिसे और दशम तृतीय भावको एक चरणसे और नवम पंचम भावको दो चरणसे और चतुर्थ अष्टम भावको तीन चरणसे देखते हैं और समस्त ग्रह इन्ही पूर्वोक्त भावोंको क्रमसे एक चरण दो चरण तथा वन्हिपाद अर्थात् तीन चरण तथा पूर्ण देखते हैं तात्पर्य यह है कि समस्त ग्रह दशम तृतीयको एक और नवम पंचमको दो चरण और चतुर्थ अष्टमक चरण और सप्तम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखते हैं ऐस ग्रन्थोंके विषैं विद्वान् मुनिगण कहते हैं ॥ ७ ॥

इसके अनन्तर सूर्यके उच्चादि राशि तथा मित्रादिग्र

और भावोंका शुभाशुभ फल कहते हैं।

तुंगोजे तौलिनीचो गहनचरपतिः पद्मिनीप्रा-
णपालः शत्रू दैत्येज्यमंदौ शशधरतनयो

मुख्यसामान्यभावः ॥ शेषा मित्राणि खेटा उपचयसुखदो मध्यमः कोशकोणे केंद्रे दुष्टोऽतिदुष्टो व्ययगजभवने कीर्तितः कोविदोच्चैः ॥ ८ ॥

अर्थ—पद्मिनी नाम कमलिनीके प्राणोंकी रक्षा करनेवाले सूर्य अज (मेष) राशिपर उच्च और तुलाराशिपर नीच और गहनचर (सिंह) राशिके स्वामी है और सूर्यके शत्रु दैत्येज्य (शुक्र) और मंद (शनि) हैं और शशधरतनय (बुध) सम है और शेष ग्रह चंद्रमा मंगल बृहस्पति मित्र हैं और यह सूर्य उपचय (तृतीय षष्ठ दशम एकादश) भावके विषैं सुखप्रद है और कोश (द्वितीय) और कोण (पंचम नवम) भावके विषैं मध्यम है और केंद्र (प्रथम चतुर्थ सप्तम) भावके विषैं दुष्ट अर्थात् अशुभ है और व्यय (बारहवें) गज (अष्टम) भावके विषैं अति अशुभ उत्तम विद्वानोंने कहा है ॥ ८ ॥

इसके अनन्तर चंद्रमाके उच्चादि राशि तथा मित्रादि ग्रह तथा भावोंका शुभाशुभ कहते हैं।

कर्काधीशो वृषोच्चो जलनिधितनयो वृश्चिको यस्य नीचो मित्रे चण्डांशुसौम्यौ तदनु परखगाः सन्ति सामान्यभावाः ॥ पाताले कोशकोणे जनकभवगृहे सर्वसिद्धार्थकारी सामान्यो दर्पगेहे तदनु परगृहे चंद्रमा न प्रशस्तः९

अर्थ–जलनिधितनय (चंद्रमा) कर्कराशिका स्वामी है और वृषराशिका उच्च है और जिस चंद्रमाका वृश्चिक-राशि नीच है और जिसके मित्र चण्डांशु (सूर्य) और सौम्य (बुध) हैं और अन्य ग्रह मंगल शनि चंद्र शुक्र बृहस्पति सम हैं और पाताल (चतुर्थ) और कोश (द्वितीय)और कोण (नवम पंचम) और जनक (दशम) और भव (एकादश) इन भावोंमें स्थित हुआ समस्त सिद्धार्थोंका करनेवाला है और दर्प (सप्तम) गृहमें सम है और अन्य गृह अर्थात् प्रथम तीसरे छठे आठवें बारहवें भावमें चंद्रमा शुभ नहीं है ॥ ९ ॥

इसके अनन्तर मंगलके उच्चादि राशि तथा मित्रादि ग्रह और भावोंका शुभाशुभ कहते हैं ।

मेषालीशो मृगोच्चः सलिलचरणतश्चंद्रजो यस्य शत्रुर्मित्राणीन्द्वर्कजीवास्तदनु परखगौ द्वौ च सामान्यभावौ ॥ राज्ये लाभे त्रिषष्ठे सकलसुखकरः कीर्तितो ब्रह्मपुत्रैः शेषे भावे न शस्तो झटिति फलप्रदो मङ्गलः खड्गहस्तः ॥ १० ॥

अर्थ–खड्ग नाम तलवार है हाथमें जिसके ऐसा मंगल मेष और अलि (वृश्चिक) राशिका स्वामी है और मृग (मकर) राशिपर उच्च है और सलिलचर (कर्क) राशिपर नीच है और जिसका शत्रु चंद्रज (बुध) है और मित्र इंदु (चंद्रमा) और अर्क (सूर्य) और जीव (बृहस्पति) है और अन्य दो ग्रह शुक्र तथा शनि सम हैं और राज्य (दशम) और लाभ (एकादश) और तृतीय तथा छठे भावमें शीघ्रही शुभ फल देनेवाला तथा

समस्त सुखोंके करनेवाला ब्रह्मपुत्रोंने कहा है और शेष-भाव अर्थात् प्रथम द्वितीय चतुर्थ पंचम सप्तम अष्टम नवम द्वादश भावोंमें शुभ नहीं है ॥ १० ॥

इसके अनन्तर बुधके उच्चादि राशि तथा मित्रादि ग्रह और भावोंका शुभाशुभ कहते हैं ।

कामेशः कन्यकोच्चः प्रणतजलचरो वै रिपुर्यस्य चंद्रो मित्राणीनार्किशुक्राः कुसुतगुरुसमौ कोशगेहेतिशस्तः ॥ लग्ने लाभे चतुर्थे सुतनवजनके कामगेहे प्रशस्तः शेषे भावे न शस्तो हिमकरतनयः कीर्तितो गर्गमुख्यैः॥ ११ ॥

अर्थ—हिमकरतनय (बुध) काम (मिथुन) राशिका स्वामी है और कन्याराशिपर उच्च है और जिसकी नीच जलचर (मीन) राशि है और जिसका रिपु शत्रु चंद्रमा है और मित्र इन (सूर्य) और आर्कि (शनि) तथा शुक्र है और कुसुत (मंगल) और गुरु (बृहस्पति) यह दोनों सम हैं और कोश (धन) भावमें अतिशुभ है और लग्न तथा लाभ (एकादश) और चतुर्थ और सुत

(पंचम) और नवम और जनक (दशम) और काम (सप्तम) गृहमें शुभ है और शेष भाव अर्थात् तीसरे छठे आठवें बारहवें भावमें गर्गादिकोंने प्रशस्त नहीं कहा है ॥ ११ ॥

इसके अनन्तर बृहस्पतिके उच्चादिराशि तथा मित्रादि ग्रह और भावोंका शुभाशुभ कहते हैं ।

कर्कोच्चो नक्रनीचो विबुधपतिगुरुर्मीनकोदण्डनाथो मित्राणीन्द्वर्कभौमाः समरवितनयो वैरिणौ सौम्यशुक्रौ ॥ कोणे केंद्रायकोशे अतिशुभफलदो मध्यमो भ्रातृगेहे रंध्रे कैवल्यदाता तदनु परगृहे नैव जीवः प्रशस्तः॥१२॥

अर्थ–विबुधपतिगुरु (बृहस्पति) कर्कराशिपर उच्च और नक्र (मकर) राशिपर नीच और मीनराशि तथा कोदण्ड (धनु) राशिका स्वामी है और जिसके मित्र इन्दु (चंद्रमा) और अर्क (सूर्य) भौम (मंगल) हैं और सम रवितनय (शनि) है और वैरी सौम्य (बुध) और शुक्र हैं और कोण (नवम पंचम)और केंद्र (प्रथम चतुर्थ सप्तम दशम) और आय (एकादश) और कोश (द्वितीय)

भावमें अतिशुभ फल देनेवाला है और भ्रातृ (तीसरे) स्थानमें मध्यम है और रंध्र (अष्टम) भावमें कैवल्य मोक्षके देनेवाला है और शेष गृह अर्थात् छठे बारहवें भावमें जीव (बृहस्पति) शुभ नहीं है ॥ १२ ॥

इसके अनन्तर शुक्रके उच्चादिराशि तथा मित्रादिग्रह और भावोंका शुभाशुभ फल कहते हैं ।

मीनोच्चः स्त्री च नीचस्तुलवृषभपतिर्वैरिणौ भानुचंद्रौ सामान्यौ पूज्यभौमौ तदनु च सुहृदौ सौम्यमन्दग्रहौ द्वौ ॥ संप्राप्तो दर्पगेहे तनुसुखजनके कोणकोशे प्रशस्तः शेषे भावे न शस्तो वदति च भृगुजः पूर्वग्रन्थेषु तज्ज्ञः॥१३

अर्थ–भृगुज (शुक्र) मीनराशिपर उच्च है और जिसकी स्त्री (कन्या) राशि नीच है और तुला तथा वृषराशिका स्वामी है और जिसके वैरी भानु (सूर्य) तथा चंद्रमा हैं और सम पूज्य (बृहस्पति) और भौम (मंगल) हैं और मित्र सौम्य (बुध) और मन्द (शनि) ये दो

ग्रह हैं और संप्राप्ति (एकादश) और दर्प (सप्तम) गृह और तनु (लग्न) और सुख (चतुर्थ) और जनक (दशम) और कोण (नवम पंचम) और कोश (द्वितीय) इन भावोंपर प्राप्त होकर अतिशुभ है और शेषभाव अर्थात् तीसरे छठे आठवें बारहवें शुभ नहीं है ऐसा पूर्वग्रंथोंके विषैं उस शुक्रके फलके जाननेवाले विद्वान् कहते हैं ॥१३॥

इसके अनन्तर शनैश्वरके उच्चादि राशि तथा मित्रादि ग्रह और भावोंका शुभाशुभ कहते हैं ।

तौलोच्चो मेषनीचो हरिणघटपतिः पद्मिनीपालपुत्रो दुष्टौ द्वौ भानुभौमौ बुधसिततमसो यस्य मित्राणि सर्वे ॥ सामान्यो देवमंत्री रसशिवसहजे व्योमगश्चातिशस्तः शेषे भावे न शस्तो मुनिगणसहितैर्भाषितः पूर्वधीरैः॥१४॥

अर्थ–पद्मिनीपालपुत्र (शनि) तुलाराशिपर उच्च और मेषराशिपर नीच और हरिण (मकर) तथा घट (कुंभ) राशिका स्वामी है और जिसके दुष्ट शत्रु भानु (सूर्य)

और भौम (मंगल) हैं और बुध तथा सित (शुक्र) और तमस(राहु)यह तीनों मित्र हैं और देवमंत्री (बृहस्पति) सम है और रस (छठे) और शिव (ग्यारहवें) और सहज (तीसरे) और व्योम दशवें भावमें अतिशुभ है और शेषभाव प्रथम द्वितीय चतुर्थ पंचम सप्तम अष्टम नवम द्वादश भावमें मुनिगणोंसहित पूर्वविद्वानोंने शुभ नहीं कहा है ॥ १४ ॥

इसके अनन्तर राहुके उच्चादि राशि तथा मित्रादि ग्रह और भावोंका शुभाशुभ फल कहते हैं ।

कामोच्चः कामिनीशः प्रणतशरधरः सिंहिका-गर्भभूतो दुष्टाः सूर्य्येन्दुभौमा बुधसितश-नयो यस्य मित्राणि खेटाः ॥ सामान्यो देव-पूज्यः सहजरसशिवे सर्वदोषप्रहर्त्ता शेषे भावे न शस्तः कलियुगफलदः कालरुद्रा वदंति ॥ १५ ॥

अर्थ–सिंहिकागर्भभूत (राहु) काम (शनि) ये दो

उच्च और कामिनी (कन्या) राशिका स्वामी है और जिसका नीच शरधर (धनु) है और जिसके दुष्ट (शत्रु) सूर्य और इन्दु (चंद्रमा) और भौम(मंगल) हैं और मित्र ग्रह बुध सित (शुक्र) और शनि हैं और सम देवपूज्य (बृहस्पति) हैं और सहज (तीसरे) और रस(छठे) और शिव (ग्यारहवे) भावमें समस्त दोषोंके हरनेवाला और शेष भाव अर्थात् प्रथम द्वितीय चतुर्थ पंचम सप्तम अष्टम नवम दशम द्वादश भावमें कलियुगके विषैं फल करनेवाला राहु शुभ नहीं है ऐसा कालरुद्र कहते हैं ॥ १५ ॥

इसके अनन्तर केतुके उच्चादि राशिज्ञान एक श्लोककर कहते हैं ।

चापोच्चः कामनीचो वनरसचरपः कज्जलाभः करालः सिंहे मूलत्रिकोणे हितसमरिपवो राहुवद्भावभर्त्ता ॥ कोपात्मा कोपकेलिर्हिमकरकदनः क्रूरकर्मा कठोरो म्लेच्छानां कार्यकर्त्ता झटिति कलियुगे विक्रमागारकेतुः॥१६॥

अर्थ—हिमकर नाम चंद्रमाके कदन करनेवाला केतु चाप (धनुष) राशिपर उच्च और काम (मिथुन) राशिपर नीच और वनरसचर (मीन) राशिका स्वामी है और जिसके मूल त्रिकोणमें सिंहराशि है और कज्जलके समान कान्तिवाला है और कराल भयंकर है और जिसके हित नाम मित्र और सम तथा रिपु(शत्रु)राहुकी समान हैं और राहुके समानही भावोंके पोषण करनेवाला है अर्थात् जो कि मित्र सम शत्रु राहुके हैं वेही केतुके हैं और जिन भावोंपर राहु उत्तम होता है उन्हीं भावोंपर केतु उत्तम होता है और स्वयं क्रोधात्मा तथा क्रोधयुक्त क्रीडावाला और क्रूरकर्मा तथा कठोरप्रकृति है और विक्रम (तृतीय) गृहमें स्थित हुआ केतु कलियुगके विषैं शीघ्रही म्लेंच्छोंके कार्य करनेवाला है ॥ १६ ॥

इसके अनन्तर जो ग्रह जिस स्थानपर अतिशुभ
होते हैं उसका विचार कहते हैं ।

चक्रे सूर्योतिशस्तः सुखभवनगतः पूर्णचंद्रो-

तिशस्तो भौमो वन्हौ प्रशस्तो धनसदन-
गतश्चंद्रपुत्रोतिशस्तः ॥ कोशे जीवोतिशस्त-
स्तनुगतभृगुजो विक्रमेर्किः प्रशस्तो लाभे
सर्वप्रशस्ताः कथितफलकराः पाण्डुपुत्रा
वदन्ति ॥ १७ ॥

अर्थ—चक्र (दशम) भावमें सूर्य अतिशुभ होता है और सुख (चतुर्थ) स्थानपर स्थित हुआ चंद्रमा अतिशुभ होता है और वन्हि (तृतीय) भावमें भौम (मंगल) अतिशुभ होता है और धन (द्वितीय) गृहपर स्थित हुआ चंद्रपुत्र (बुध) अतिशुभ होता है और कोश (द्वितीय) स्थानपर जीव (बृहस्पति) अतिशुभ होता है और लग्नमें स्थित हुआ भृगुज (शुक्र) अतिशुभ होता है और विक्रम (तृतीय) भावमें अर्कि (शनि) अतिशुभ होता है और लाभ (एकादश) भावमें समस्त ग्रह अतिशुभ होकर जातकोक्त समस्त शुभफल करनेवाले होते हैं ऐसा पाण्डुपुत्र कहते हैं ॥ १७ ॥

इसके अनन्तर ब्राह्मणोंका शुभयोगज्ञान दो श्लोकोंसे कहते हैं।

कीटे कोदण्डकेरे कुलिशकरनुते कोशकंजा-
सनस्थे नन्दे नाभौ नदीशेनलहरनिलये
नन्दने नंदनाथे॥शुक्रे गोतौलितुंगे विगतदि-
नमणौ ब्राह्मणानां प्रसूतौ ते भूपैर्वन्द्यमाना
नरवरगुरवः प्रौढधीरा भवन्ति ॥ १८ ॥

अर्थ—ब्राह्मणोंके जन्मकालके विषैं कुलिशकरनुत (बृहस्पति) कीट (कर्क) वा कोदण्ड (धनु) वा केर (मीन) राशिपर स्थित होकर कोश (द्वितीय) वा कंजासन (मूर्ति) वा नन्द (नवम) वा नाभि (दशम) वा नदीश (सप्तम) वा अनलहर (चतुर्थ) गृह वा नन्दन (पंचम) वा नन्दनाथ (एकादश) भावमें स्थित होवे वा शुक्र गो (वृष) वा तुला वा उच्चराशिपर स्थित होकर इन्हीं स्थानोंमेंसे किसी स्थानपर स्थित होवे तो वह ब्राह्मण राजाओंकर प्रणाम किये तथा उत्तम नरोंके गुरु और अतीव विद्वान् होते हैं परन्तु कैसे हों बृहस्पति वा शुक्र कि विगतदिनमणी अर्थात् सूर्यकर वर्जित होवें ॥ १८ ॥

विप्राणां जन्मकाले विबुधपतिगुरुर्दानवेशा-
धिमन्त्री स्वस्थे मूलत्रिकोणे दिनकररहि-
तः संयुतस्तुंगराशौ ॥ पुत्रे पातालल्ग्ने मन-
सिजनिलये धर्म्मकर्म्मायकोशे ज्ञातो मोदप्र-
युक्तः स भवति मनुजो भूपमान्यो धनाढ्यः ॥ १९॥

अर्थ—ब्राह्मणोंके जन्मकालके समयपर यदि विबुधपतिगुरु (बृहस्पति) वा दानवेशाधिमंत्री (शुक्र) अपनी राशिपर स्थित हो मूलत्रिकोण राशिपर स्थित हो वा उच्च

---

१ सूर्यादिग्रहोंका मूलत्रिकोण तथा स्वगृह और उच्चराशियोंके अंशोंको और ग्रंथसे लिखते हैं—सूर्यके सिंहराशिपर प्रथमके २० अंश मूलत्रिकोणसंज्ञक हैं और शेष दश १० अंश स्वगृहसंज्ञक हैं और सूर्य मेष राशिके १० अंशपर्यन्त परम उच्च और तुलाके १० अंशपर्यन्त परम नीचका है और चंद्रमाके ३ अंश वृषराशिपर परम उच्च संज्ञक हैं और शेष २७ अंश मूल त्रिकोणसंज्ञक हैं और वृश्चिक राशिपर चंद्रमाके ३ अंश परम नीचसंज्ञक हैं और मंगलके १२ अंश मेषराशि पर मूलत्रिकोणसंज्ञक हैं और शेष १८ अंश स्वगृहसंज्ञक हैं और मंगल

राशिपर स्थित हो और दिनकर (सूर्य) से वर्जित होकर पुत्र (पंचम) वा पाताल (चतुर्थ) वा लग्न वा मनसिज (सप्तम) गृह वा धर्म्म (नवम) वा कर्म्म (दशम)वा आय (एकादश) वा कोश (द्वितीय) भावमें स्थित होवे तौ वह मनुष्य शास्त्रोंके जाननेवाला आनन्दयुक्त तथा राजाओंके मान्य और धनी होता है ॥ १९ ॥

मकरके २८ अंशपर्यन्त परम उच्च और कर्कके २८ अंशपर्यन्त परम नीचका है और बुध कन्याराशिके १५ अंशपर्यन्त परम उच्च है और इनसे पश्चात् १० अंश मूलत्रिकोण हैं और शेष ५ अंश स्वगृहसंज्ञक हैं और मीनके १५ अंशतक परम नीचका है और बृहस्पतिके १० अंश धनुराशिपर मूलत्रिकोण संज्ञक हैं और शेष २० अंश स्वगृहसंज्ञक हैं और कर्कके ९ अंशपर्यन्त परम उच्च और मकरके ५ अंशपर्यन्त परम नीचका है और शुक्रके १५ अंश तुलाराशिपर मूलत्रिकोण संज्ञक हैं और शेष १५ अंश निजगृहसंज्ञक हैं और मीनके २७ अंशपर्यन्त परम उच्च और कन्याके २७ अंशपर्यन्त परम नीचका है और शनिके कुम्भराशिपर २० अंश मूलत्रिकोण और शेष १० अंश निजगृहसंज्ञक हैं और तुलाराशिके २० अंशतक परम उच्च और मेषराशिके २० अंशतक परमनीचका है ॥

इसके अनन्तर क्षत्रियोंका शुभयोगज्ञान कहते हैं ।

भूपानां जन्मकाले वनजवनपतिर्मेदिनीगर्भ-
भूतो दुश्चिक्ये वा शिवे वा दनुजबलहरे
दुष्टगेहे गतोपि ॥ स्वोच्चः स्वस्थः प्रि[illegible]स्थः
खलबलविगतो द्वारदेशेषु तेषां वादित्रैर्मेघ-
घोषैर्गजरथतुरगैः सेवकैः सेव्यमानाः॥२०॥

अर्थ–राजाओंके जन्मकालके विषैं वनजवनपति (सूर्य) वा मेदिनीगर्भभूत (मंगल) दुश्चिक्य (तीसरे) वा शिव (ग्यारहवें) वा दनुजबलहर (दशवें) वा(दुष्ट)छठे गृहमें स्थित होकर अपने उच्चका हो वा अपनी राशिपर स्थित हो वा मित्रकी राशिपर स्थित हो और दुष्ट अर्थात् पापग्रह और शत्रुओंके बलसे हीन हो तो उन क्षत्रियोंके दरवाजों- पर स्थित हुए मेघके समान शब्दवाले वादित्र (बाजे) और हाथी रथ घोडा और दास दासीगणोंसे वह सेवित रहते हैं ॥ २० ॥

इसके अनन्तर वैश्योंका शुभयोगज्ञान कहते हैं ।

वैश्यानां जन्मकाले दिनकररहितः प्रौढपा-

थोधिपुत्रः पाताले पुत्रपुण्ये जनकधनभवे भव्यभाग्यप्रकर्त्ता ॥ सामान्यो दर्पगेहे सहजगृहगतो लग्नभावे गतोपि रंध्रे रिःफारिभावे परमबलयुतो यामिनीशो न शस्तः ॥२१॥

अर्थ–वैश्योंके जन्मकालके विषैं दिनकर (सूर्य) से वर्जित हुआ अतिबली पाथोधिपुत्र (चंद्रमा) पाताल(चतुर्थ) वा पुत्र (पंचम) वा पुण्य (नवम) वा जनक (दशम) वा धन (द्वितीय) वा भव (ग्यारहवें) भावमें स्थित होकर शुभभाग्यके करनेवाला है और दर्प (सप्तम) गृहमें वा सहज (तृतीय) भावमें स्थित हुआ वा लग्नभावमें स्थित हुआ मध्यम फलकर्त्ता है और रन्ध्र (अष्टम) और रिःफ (बारहवें) वा अरि (छठे) भावमें परम बलसे युक्त होकर यामिनीश (चंद्रमा) शुभ नहीं होता है ॥ २१ ॥

इसके अनन्तर शूद्रोंका शुभयोगज्ञान कहते हैं ।

शूद्राणां जन्मकाले सकलबलयुतो यामिनीनाथपुत्रः स्वस्थो मूलत्रिकोणे रविरिपुसहि-

तो वर्जितः शत्रुराशौ ॥ लग्ने दैत्येन्द्रलोके
कुसुमशरगतः कोणकर्मेशकोशे ज्ञाता दाता
च पाता स भवति मनुजो प्रौढभूपाधिमंत्री॥२२॥

अर्थ—शूद्रोंके जन्मकालके विषैं सकल बलसे युक्त होकर यामिनीनाथपुत्र (बुध) अपने राशिपर वा मूलत्रि-कोणपर स्थित होवे और सूर्यके शत्रु शुक्र और शनि कर युक्त होवे और शत्रुकी राशिपर वर्जित हो अर्थात् शत्रुकी राशिपर होवे नहीं और लग्न वा दैत्येन्द्रलोक (चतुर्थ) वा कुसुमशर(सप्तम)भावमें स्थित हो वा कोण(नवम पंचम) वा कर्म (दशम) वा ईश (एकादश) वा कोश (द्वितीय) भावमें स्थित होवे तो वह नर बुद्धिमान् दानी भोगी और अतिबली तथा राजाओंका मंत्री होता है ॥ २२ ॥

इसके अनन्तर म्लेच्छोंका शुभयोगज्ञान कहते हैं ।

म्लेच्छानां जन्मकाले लचसदभवने विक्रमेशे
बलस्थाः पापा मंदादिखेटा दिनकररहिताः
स्वात्मवर्गेषु युक्ताः ॥ कर्कस्था वा वृषस्थाः

सुहृद्गृहगतास्तुंगगेहेषु स्वस्था नीचे वंशेपि
जाता विगतकुलनरास्तेपि भूपा भवन्ति ॥२३ ॥

अर्थ—म्लेच्छोंके जन्मकालके विषैं लचसद (लग्न चतुर्थ सप्तम दशम) वा विक्रम (तृतीय)वा ईश (एकादश) भावके विषैं बली होकर सूर्यसे वर्जित हुए पापग्रह मंद (शनि) और आदिशब्दसे राहु केतु यह तीनों ग्रह स्थित हों और वे ग्रह अपने २ षड्वर्गमें युक्त होकर कर्कराशिपर वा वृषराशि वा मित्रोंके गृहमें वा उच्चराशिपर वा अपनी राशिपर स्थित होवें तो वह भ्रष्टकुलके नर नीच वंशमेंभी उत्पन्न हुए पृथिवीपति हो जाते हैं ॥ २३ ॥

इसके अनन्तर सर्वसाधारण राजयोग कहते हैं ।

कर्के कोदण्डमीने यदि तुलवृषभे मन्मथे
कन्यकायां जीवो दैत्येशमंत्री हिमकरत-
नयः कोणकेंद्रे धनेपि ॥ पापालाभे त्रिषष्ठे
रविकुजशनयो यस्य संजातकाले राजा
प्रौढप्रतापो भवति स मनुजः सर्वदेशेषु मान्यः२४

अर्थ—जिसके जन्मकालके विषैं यदि कर्कराशि वा कोदण्ड (धनु) वा मीनराशिपर जीव (बृहस्पति) और तुला वा वृषराशिपर दैत्येशमंत्री (शुक्र) और मन्मथ (मिथुन) राशि वा कन्याराशिपर हिमकरतनय (बुध) स्थित होकर कोण (नवम पंचम) और केंद्र (लग्न चतुर्थ सप्तम दशम) धन (द्वितीय) इन भावोंमेंसे किसी भावपर स्थित हों और रवि (सूर्य) और कुज (मंगल) शनि यह पापग्रह लाभ (एकादश) तृतीय षष्ठ स्थानोंमेंसे किसी स्थानपर बैठे हों तो वह मनुष्य अतीव प्रतापवाला राजा और सर्व देशके विषैं मान्य होता है ॥ २४ ॥

इसके अनन्तर अन्य राजयोग कहते हैं ।

मेषस्थौ भानुभौमौ वृषशशिभृगुजौ भौममन्दौ मृगस्थौ कन्यायां रौहिणेयो रविशशिदमनः कर्कटे जीवचंद्रौ ॥ मीनस्थौ शुक्रजीवौ तुलशनिभृगुजौ मन्मथे राहुसौम्यौ चैतद्योगेषु जातः स भवति मनुजो भूमिपालो धनी वा ॥ २५ ॥

अर्थ—भानु (सूर्य) और भौम (मंगल) ये दोनों मेषराशिपर स्थित हों वा वृषराशिपर शशी (चंद्रमा) और भृगुज (शुक्र) ये दोनों स्थित हों वा भौम (मंगल) और मंद (शनि) दोनों मृग (मकर) राशि-पर स्थित हों वा रौहिणेय (बुध) और रविशशिदमन (राहु) ये दोनों कन्याराशिपर स्थित हों वा जीव (बृहस्पति) और चंद्रमा कर्कराशिपर स्थित हों वा शुक्र और जीव (बृहस्पति) ये दोनों मीनराशिपर स्थित हों वा तुलाराशिपर शनि और शुक्र हों वा मन्मथ (मिथुन) राशिपर राहु और सौम्य (बुध) हों इन योगोंके विषैं जो नर उत्पन्न होता है वह पृथिवी-पाल वा धनी होता है ॥ २५ ॥

इसके अनन्तर दुर्धरा योग और उसका फल कहते हैं।

सोमादन्त्यद्वितीयगो गगनगो भानुं विना कोपि
चेद्योगोयं खलु दुर्धराखिलजनैर्जन्माधिकाले यदा॥

पूर्णेन्द्वाननपद्मिनीदलदृशां नाथाः सुरूपान्विता
नानावाहवसुंधरातिवसुभिर्युक्तास्तु ते मानवाः॥२६॥

अर्थ--जो यदि जन्मके समय सोम(चंद्रमा) अन्त्य (बारहवें) और दूसरे स्थित हुआ ग्रह सूर्यके विना कोईभी होवे तो यह योग समस्त विद्वान् जनोंने दुर्धराना-मसे कहा है जिन पुरुषोंके यदि यह योग होवे तो वह जन पूर्णचंद्रके समान मुखवाली तथा कमलपत्रके समान नेत्रोंवाली स्त्रियोंके स्वामी तथा सुन्दर रूपसे युक्त होते हैं और अनेक वाहन तथा वसुंधरा (पृथिवी) और अतीव धनोंसे सदैव सम्पन्न रहते हैं ॥ २६ ॥

इसके अनन्तर केमद्रुम तथा अनफा और सुनफा
नाम योगोंको फलपूर्वक कहते हैं ।

चंद्रादंत्ये द्वितीये भवति न खचरः कोपि यस्य
प्रसूतौ योगः केमद्रुमोयं धनदलदमनो भाषितो
ब्रह्मपुत्रैः ॥ स्यादन्ते सानफाख्या तदनु च सुनफा-

नामयोगो विनार्कं ज्ञाता दाता च पाता बहुधनसहितः सर्वदा मानवानाम् ॥ २७ ॥

अर्थ—चंद्रमासे अन्त्य (बारहवें) और दूसरे कोईभी ग्रह न होवें तो यह केमद्रुम योग धनके समूहके नाश करनेवाला ब्रह्मपुत्र मुनिजनोंने कहा है और चन्द्रमासे अन्त (बारहवें) ही स्थानपर सूर्यके विना कोई ग्रह होवें और दूसरे स्थानपर होवे नहीं तौ वह अनफानाम योग है और चंद्रमासे द्वितीय स्थानपर सूर्यके विना कोई ग्रह होवें और बारहवें स्थानपर होवें नहीं तौ वह सुनफायोग है इन अनफा तथा सुनफाके विषैंभी उत्पन्न भया मनुष्य बुद्धिमान् तथा दानी और भोगी और सदैवही बहुतसे धनोंसे युक्त रहता है ॥ २७ ॥

इसके अनन्तर उभयचरी तथा वोशि और वेशि और कर्त्तरी योगोंको फलपूर्वक कहते हैं ।

सूर्यस्यान्ते द्वितीये मृगधरविगतः सौम्यकः पापखेटो योगोयं भूपतुल्यो ह्युभयचरिचरी

भाषितो ज्ञानमेहैः॥ अन्ते वोशिः प्रसिद्धो ध-
ननिलयगतो वेशियोगः प्रशस्तस्तस्य प्रान्ते
द्वितीये भवति न खचरः कर्त्तरी सो न शस्तः २८

अर्थ–सूर्यके अन्त (बारहवें) और दूसरे स्थानमें मृगधर (चंद्रमा) से वर्जित होकर सौम्य वा पापग्रह स्थित होवें तौ यह योग विद्वानोंने उभयचरी कहा है इस योगके विषैं उत्पन्न हुआ पुरुष राजतुल्य होता है और केवल सूर्यके अन्त (बारहवें) भावमें चंद्रमाके विना कोई ग्रह होवें तौ वह वोशियोग प्रसिद्ध है और केवल सूर्यके धन (द्वितीय) भावमें चंद्रमाके विना कोई ग्रह होवे तौ वह वेशियोग शुभ होता है और उस सूर्यके अन्त (बारहवें) और दूसरे कोई ग्रह नहीं होवें तौ कर्त्तरी योग होता है वह शुभ नहीं है ॥ २८ ॥

इसके अनन्तर अन्य शुभयोगज्ञान कहते हैं।

लग्नांत्ये कामकोशे हरिचरणचराश्चार्थकेंद्रेषु
सौम्या लग्नाद्वेदान्तखेटा दितिसुतभुवनात्का-

मपर्यन्तखेटाः ॥ कामात्तातान्तखेटा मधुहर-
भवनाल्लग्नपर्य्यन्तसर्वैं चैतद्योगेषु जाताः
पतितकुलनरास्तेपि भूपा भवन्ति ॥ २९ ॥

अर्थ—लग्न और अन्त्य (बारहवें) वा काम (सप्तम) और कोण (पंचम नवम) में वा अर्थ (द्वितीय)और केंद्र (लग्न चतुर्थ सप्तम दशम) भावमेंसे किसीपर सौम्य हरिचरणचर (ग्रह) स्थित होवें वा लग्नसे लेकर वेद (चतुर्थ) भाव पर्य्यन्त सर्व ग्रह होवें वा दितिसुतभुवन (चतुर्थ) भावसे लेकर काम (सप्तम) भावपर्यन्त सर्व ग्रह होवें वा काम (सप्तम) भावसे लेकर तात (दशम) भावपर्यन्त सर्व ग्रह होवें वा मधुहर (दशम) भवनसे लेकर लग्नपर्य्यन्त सर्व ग्रह होवें तौ इन योगोंके विषैं जो नर उत्पन्न हुए हैं वे नीचकुलके होकरभी राजा होते हैं ॥ २९ ॥

इसके अनन्तर कुष्ठयोग और इसका फल कहते हैं ।

पाताले पुत्रगेहे तदनु रिपुगृहे पर्वते पन्नगा-

रन्ध्ये पुण्ये वा पितृकोष्ठे सकलखगवरा यस्य
जन्माधिकाले ॥ योगोयं कुष्ठसंज्ञः सकलमु-
निवरैः प्रोच्यते तत्र जातो मिथ्यावादी
नरो वै भवति च पिशुनो बन्धनागारसेवी ॥३०॥

अर्थ-पाताल (चतुर्थ) और पुत्र (पंचम) गृह और रिपु (षष्ठ) गृह और पर्वत (सप्तम) गृह और पन्नग (अष्टम) गृह और पुण्य (नवम) गृह और पितृ-कोष्ठ (दशम) गृह इनके विषैं जिसके जन्मसमय यदि समस्त ग्रह होवें तो यह योग समस्त श्रेष्ठ मुनियोंने कुष्ठ-संज्ञक कहा है इसके विषैं उत्पन्न हुआ नर झूठ बोलने-वाला तथा निन्दक तथा बन्धनागार अर्थात् बन्धनके गृहकी सेवा करनेवाला होता है ॥ ३० ॥

इसके अनन्तर नौकायोग तथा उसका फल
एक श्लोककर कहते हैं ।

लग्ने कोशे तृतीये किल सुखभवने पंचमे
वैरिभावे जायास्थाने गताश्चेत्सकलखगवरा

यस्य जन्माधिकाले ॥ योगोयं नाम नौकाप-
रमधनप्रदः कीर्त्तितो ब्रह्मपुत्रैर्नौकाख्ये पार-
कर्मा स भवति मनुजोनेकजीवस्य भर्त्ता ॥३१॥

अर्थ—लग्न और कोश (द्वितीय) और तृतीय और सुख (चतुर्थ) गृह और पंचम और वैरिभाव(छठे) गृह और जाया (सप्तम) स्थान इन स्थानोंके विषैं क्रमसे यदि समस्त ग्रह जिसके जन्मसमय होवें तौ यह नौका नाम योग परम धनके देनेवाला ब्रह्मपुत्रोंने कहा है इस नौकानाम योगके विषैं जो मनुष्य उत्पन्न होता है वह परिपूरित कर्म्म तथा अनेक जीवोंके पोषण करनेवाला होता है ॥ ३१ ॥

इसके अनन्तर चापयोग और उसका फल कहते हैं ।

राज्ये रुद्रार्कलग्ने धनसहजसुखे खेचराः सन्ति
येषां योगोयं चापसंज्ञः सकलसुखकरः
कीर्त्तितः पूर्वधीरैः ॥ तेषां द्वारप्रदेशे मदज-

लमलिनाः कुंजरास्तुंडगण्डाः सेव्यन्ते मी-
नसुग्धैर्मधुरसरसिकैः षट्पदैर्मोदमत्तैः ॥ ३२ ॥

अर्थ—राज्य (दशम) और रुद्र (एकादश) और अर्क (द्वादश) और लग्न और धन (द्वितीय) और सहज (तृतीय) और सुख (चतुर्थ) इन स्थानोंपर यदि जिनके समस्त ग्रह होवें तो यह योग सकल सुखके करनेवाला चापसंज्ञिक पूर्व विद्वानोंने कहा है जिनके यह चापयोग होता है उनके दरवाजोंपर ऊंचे गण्डस्थलवाले मदजलसे मलीन हुए हाथी मधुरसके रसिक आनन्दसे मत्त हुए मछलीके समान कोमल भौंराओंकर सेवन किये जाते हैं॥ ३२

इसके अनन्तर अन्यराजयोग कहते हैं ।

मंत्रे मारांकलग्ने विमलबलयुताः खेचराः स-
न्ति येषां योगोयं भाग्यभर्त्ता प्रचुरसुखकरो
भाषितो गर्गमुख्यैः ॥ तेषां द्वारे नदन्तः प्रब-
लवलधराः कज्जलाभाः करीन्द्रा दास्ये वंशे-
पि जाता भटदलपतयस्तेपि भूपा भवन्ति॥ ३३॥

अर्थ–मंत्र (पंचम) और मार (सप्तम) और अंक (नवम) और लग्न इन भावोंमें अतीव बलसे युक्त होकर समस्त ग्रह जिनके जन्मके समय होवें तो यह भाग्यके पोषण करनेवाला तथा समस्त सुखोंके करनेवाला योग ब्रह्मपुत्र मुनिजनोंने कहा है जिनके यह योग होवे उनके दरवाजेपर अत्यन्त बलके धारण करनेवाले कज्जलके समान करींद्र (हाथी) शब्द करते रहते हैं और वह पुरुष दासवंशमेंभी उत्पन्न होकर योधाओंके दलके स्वामी और राजा होते हैं ॥ ३३ ॥

इसके अनन्तर अन्यराज्ययोग कहते हैं ।

मूलार्थानन्दनन्दाचलभवनगताः पापसौम्या
बलस्था नीचे वंशेपि जातो भवति नरपति-
स्तस्य धन्यस्य द्वारे ॥ धीरैर्वीरैर्गभीरैर्नटभ-
टगुणिभिर्माण्डलीकैर्नरेशैर्वादित्रैर्घोरघोषैः
कनकविरचितैरानकैः सेव्यमानः ॥ ३४ ॥

अर्थ–मूल (प्रथम) और अर्थ (द्वितीय) और आन

न्द (चतुर्थ) और नन्द (नवम) और अचल (सप्तम) इन गृहोंमें स्थित हुए पाप ग्रह और सौम्य ग्रह यदि बली होवें तौ नीचवंशमें उत्पन्न हुआभी राजा होता है और उस धन्य पुरुषके दरवाजेपर स्थित हुए विद्वान् तथा शूर वीर और बडे गंभीर नर योधा गुणियों कर और मण्डलपति राजाओंकर तथा घोरशब्दवाले बाजे और सुवर्णके बने नगाडोंकर वह पुरुष सेवन किया जाता है॥ ३४॥

इसके अनन्तर अन्यराजयोग एक श्लोककर कहते हैं ।

हीने रिःस्फारिरन्ध्रे यदि शुभभवने चंद्रपा-
लो बलस्थो लग्नेशो दिक्षु गेहे दशमगृहप-
तिर्लग्नभावे बलस्थः॥ लाभेशः कोशभावे धन-
सहनपतिर्यस्य लाभे बलस्थो दास्ये वंशेपि
जातो भवति स पुरुषो राजतुल्यो धनाढ्यः॥३५॥

अर्थ–रिःस्फ (द्वादश) और अरि (षष्ठ) और रन्ध्र (अष्टम) यह तीनों भाव यदि शुभ अशुभ ग्रह दोनोंसे हीन होवें और बलवान् चंद्रमा शुभ स्थानोंपर

स्थित होवे और लग्नका स्वामी दिक्षु (दशम) गृहमें स्थित होवे और दशम गृहका स्वामी लग्नभावमें बली होकर स्थित होवे और लाभेश (ग्यारहवें भावका स्वामी) कोश (द्वितीय) भावमें स्थित हो और धन (द्वितीय) गृहका स्वामी जिसके लाभ (ग्यारहवें) भावमें बली होकर स्थित होवे तो वह नर दासोंके वंशमेंभी उत्पन्न हुआ राजाकी तुल्य धनी होता है ॥ ३५ ॥

कर्मेशे लग्नकोशे भवति सुखसुते धर्मकर्म्माय-
गेहे नो सन्धौ नैव नीचे विगतखलखगे पापव-
र्गप्रहीने ॥ तेषां प्रोत्तुंगकुम्भा भ्रमरभरयुता
मेदुराः श्यामगण्डा मातङ्गा दीर्घदन्ता प्र-
लयघननिभा द्वारदेशे नदन्ति ॥ ३६ ॥

अर्थ—कर्मेश (दशमभावका स्वामी) लग्न वा कोश (द्वितीय) वा सुख (चतुर्थ) वा सुत (पंचम) वा कर्म (दशम) वा आय (एकादश) गृहमें होवे और वह दशमभावका स्वामी न तौ संधिमें होवे और न नीचरा-

शिमें होवे और विगतखलखग अर्थात् शत्रु और पाप-ग्रहोंसे वर्जित होवे और पापग्रहोंके वर्ग नाम राशि आदि-कसे हीन होवे तौ उनके द्वारदेशके विषैं ऊंचे २ कुंम्भोंवाले तथा बहुतसे भौंराओंसे युक्त तथा मेदुर अर्थात् सघन स्निग्ध और प्रलयके मेघोंके समान बडे २ दाँतोंसे सम्पन्न हाथी शब्द करते हैं ॥ ३६ ॥

येषां लग्ने चतुर्थे मधुहरसदने भार्गवो भानु-
हीनो रेवत्यां कृत्तिकायां खलबलविगतः
स्वातिभे पुष्यभस्थः ॥ ते पूर्णेद्वाननानां क-
मलदलदृशां कामिनीनामधीशा भूपा धीरा
भवन्ति प्रबलभटवरा भाषितं नीलकण्ठैः॥३७॥

अर्थ-जिन्होंके जन्मसमय लग्न वा चतुर्थ वा मधुहर (दशम) गृहमें खल अर्थात् शत्रु वा पाप ग्रहोंके बलसे हीन होकर और भानु नाम सूर्यसे वर्जित होकर भार्गव (शुक्र) स्थित होवे और वह शुक्र या तौ रेवती वा कृ-त्तिका वा स्वातिनक्षत्र वा पुष्यनक्षत्रपर युक्त होवे तौ वह

पुरुष पूर्णचंद्रके समान मुख और कमलके पत्रके समान नेत्रोंवाली स्त्रियोंके स्वामी तथा राजा और विद्वान् अतिबली उत्तम योधा होते हैं ऐसा नीलकण्ठादिकोंने कहा है॥ ३७॥

कर्कस्थो वा मृगस्थो भवति हिमकरो देवराजारिगेहे पूर्णः प्रौढः प्रचण्डः प्रबलबलयुतः पापवर्गप्रहीनः ॥ ते धन्या ये नराणां मखफलफलिनां द्वारदेशेषु तेषां वाहा बाह्लीकजाताः पवनपरजवा घोटकाः सन्नदन्ति ॥ ३८ ॥

अर्थ–प्रौढ अतिबली तथा प्रचण्ड और परिपूर्ण हिमकर (चंद्रमा)प्रबल ग्रहोंके बलसे युक्त होकर तथा पापग्रहोंके वर्ग अर्थात् राशि आदिकसे हीन होकर कर्कराशिपर स्थित हो वा मकरराशिपर स्थित हुआ देवराजारि (चतुर्थ) गृहमें युक्त होवे तो इस योगमें जो नर उत्पन्न होते हैं वे धन्य हैं क्योंकि उन यज्ञफलोंके भोगनेवाले नरोंके द्वारदेशके विषैं बाह्लीकदेशमें उत्पन्न हुए पवनके समान वेगवाले घोडे शब्द करते रहते हैं ॥ ३८ ॥

धर्म्मेशो धर्म्मभावे जनकभवतनौ कोशपुत्रे सुखस्थो नो नीचस्थो न सन्धौ हितनिलयगतो तुंगराशौ गतो वा ॥ येषां पुण्यव्रतानां विहरति कमला लोचने पक्ष्म तेषां दास्ये वंशेपि जाता वदति मुनिवरास्ते नरेंद्रा भवन्ति ३९

अर्थ–जिनके जन्मसमय हित नाम मित्रके स्थानपर वा उच्चराशिपर स्थित हुआ धर्मेश (नवम भवनका स्वामी) धर्म (नवम) वा जनक (दशम) वा भव (एकादश) वा तनु (लग्न) वा कोश (द्वितीय) वा पुत्र (पंचम) वा सुख (चतुर्थ) गृहमें स्थित होवे और वह नवम भावका स्वामी न तौ सन्धिमें होवे और न नीचराशिपर स्थित होवे तौ उनके गृहोंमें कमला (लक्ष्मी) विहार करती है जिस प्रकार कि नेत्रके विषैं पलक और वह दासवंशमेंभी उत्पन्न हुए राजा होते हैं ऐसा मुनिवर कहते हैं ॥ ३९ ॥

लाभेशो यस्य लाभे धनसुखतनये धर्मकर्म्मोद्रिलग्ने तुंगे मूलत्रिकोणे परमप्रियगृहे

वैरिवर्गप्रहीनः ॥ विप्रो वा क्षत्रियो वा वणिज-
कुलभवः शूद्रजोप्यन्त्यजो वा प्रोक्तो गर्गादि-
मुख्यैः स भवति पुरुषो राजतुल्यो धनाढ्यः॥४०

अर्थ–जिसके जन्मसमय लाभेश (एकादश भावका स्वामी) उच्चराशि वा मूलत्रिकोण राशि वा परम मित्रके घरमें स्थित होकर वैरियोंके वर्ग नाम राशि आदिकसे वर्जित हुआ लाभ (एकादश) वा धन (द्वितीय) वा सुख (चतुर्थ) वा तनय (पंचम) वा धर्म्म (नवम) वा कर्म्म (दशम) वा अद्रि (सप्तम) वा लग्नके विषैं स्थित होवे तौ वह पुरुष ब्राह्मण होवे वा क्षत्रिय होवे वा वणिकोंके कुलमें उत्पन्न होवे वा शूद्र होवे वा अन्त्यज होवे निश्चयही राजाकी तुल्य धनाढ्य होता है यह गर्गादिक ज्योतिर्विदोंने कहा है ॥ ४० ॥

इसके अनन्तर क्षत्रियोंका राजयोग कहते हैं ।

एकेपि क्षोणिपुत्रे जनकभवगते विक्रमारौ
गते वा नक्रे मेषालिराशौ विगतदिनमणौ

भूभुजां जन्मकाले ॥ तेषां द्वारप्रदेशे मदज-
लजलदाः पीनप्रोत्तुंगकुम्भाः पारीन्द्राः क-
ज्जलाभाः खलबलदमनाः सर्वदा सन्नदन्ति॥४१॥

अर्थ—क्षत्रियोंके जन्मकालके विषैं एकही क्षोणिपुत्र (मंगल) जनक (दशम) वा भव (एकादश) भावमें स्थित होवे वा विक्रम (तृतीय) वा अरि (छठे] भावमें स्थित होवे और नक्र (मकर) वा मेष वा अलि (वृश्चिक) राशिपर युक्त होकर विगतदिनमणि अर्थात् सूर्यके साथसे वर्जित होवे यानी अस्तका न होवे तौ उन क्षत्रियोंके द्वारदेशके विषैं मदजलके वर्षाने तथा मोटे और ऊंचे कुम्भस्थलोंसे सम्पन्न कज्जलके समान कांतिसे युक्त दुष्टोंके बलके नाशकर्त्ता पारीन्द्रहाथी सदैवही शब्द करते रहते हैं ॥ ४१ ॥

इसके अनन्तर ब्राह्मणोंका राजयोग कहते हैं ।

एकश्चेद्ब्रह्मनाथो विबुधपतिगुरुर्ब्राह्मणानां प्र-
सूतौ गात्रे गोत्रे गिरीशे गरुडधरगिरौ धी-

निधौ कोशस्वोच्चे ॥ श्रीकर्त्ता विघ्नहर्ता वदति मुनिवरो भव्यभाग्यप्रभर्त्ता तेषां पादारविंदे मणिमयमुकुटाः पार्थिवानां लुठन्ति ॥ ४२ ॥

अर्थ—ब्राह्मणोंके जन्मसमय जो एकही लग्नका स्वामी होकर विबुधपतिगुरु (बृहस्पति) गात्र (प्रथम) वा गोत्र (चतुर्थ) वा गिरीश (एकादश) वा गरुडधर (दशम) वा गिरि (सप्तम) वा धी (पंचम) वा निधि (नवम) वा कोश (द्वितीय) भावमें स्थित होकर अपने उच्च राशिपर बैठा होवे तौ श्रीकर्त्ता तथा विघ्नोंके हरनेवाला तथा शुभ भाग्यके बढानेवाला होता है और उन ब्राह्मणोंके चरणकमलोंके विषैं राजाओंके मणियोंसे जटित मुकट लोटते हैं ऐसा मुनिजन कहते हैं ॥ ४२ ॥

इसके अनन्तर म्लेच्छोंका सौभाग्ययोग कहते हैं।

ये मन्दाद्यास्त्रिखेटाः कलियुगबलिनो भव्यभावानुभाजस्तुंगाः स्वस्था हितस्था रिपुशिवसहजे म्लेच्छजानां प्रसूतौ ॥ नो युक्ता

नीचसन्धौ विगतदिनकरा भाषितं नीलक-
ण्ठैर्भूपा धीराः प्रवीरा धनिकुलकलशा मा-
नुषास्ते भवन्ति ॥ ४३ ॥

अर्थ—म्लेच्छ जनोंके जन्मसमय जो कि मन्द (शनि) और आदि शब्दसे राहु केतु यह तीन ग्रह कलियुगमें बली तथा शुभ भावोंके सेवन करनेवाले होकर उच्च वा अपने राशि वा हित (मित्र) के स्थानमें स्थित हुए रिपु (छठे) और शिव (एकादश) और सहज (तीसरे (इन भावोंमें-से किसी स्थानपर स्थित होवें और वह शनि राहु केतु नीचराशि वा संधिमें युक्त होवें नहीं और विगतदिनकर अर्थात् सूर्यसे वर्जित होवें तौ वह म्लेच्छजन राजा तथा विद्वान् और शूरवीर तथा धनियोंके कुलमें कलशरूप होते हैं ऐसा नीलकंठादिकोंने कहा है ॥ ४३ ॥

तौले कुम्भे कुरङ्गे यदि झषवृषभे कार्मुके क-
न्यकायां दुश्चिक्ये वा खले वा पशुपतिनिलये
पद्मिनीपालपुत्रः॥ कुम्भे वै कन्यकायां लच-

सद्भवने विक्रमेशे खले वा मेषे कर्के वृषे वा
मिथुनगततमः सार्वभौमं करोति ॥ ४४ ॥

अर्थ–तुला वा कुम्भ वा कुरंग (मकर) वा झष (मीन) वा वृष वा कार्मुक (धनु) वा कन्याके विषैं स्थित होकर पद्मिनीपालपुत्र (शनि) दुश्चिक्य (तृतीय) वा खल (षष्ठ) वा पशुपति(एकादश) गृहमें स्थित होवे और कुंभ वा कन्या वा मेष वा वृष वा कर्क वा मिथुन राशिपर स्थित हुआ तम (राहु) लचसद (लग्न वा चतुर्थ वा सप्तम वा दशम) गृह वा विक्रम (तृतीय) वा ईश (एकादश) वा खल (षष्ठ) भावमें स्थित होवे तौ उस पुरुषको चक्रवर्ती राजा करता है ॥ ४४ ॥

इसके अनन्तर ग्रहोंकी उत्तमाधमता कहते हैं ।

तुंगस्था वा हितस्थाः सकलबलयुता भानुहीनाः सुपुष्टास्ते नो तुंगा न स्वस्थाः स्वहितगृहगता मित्रसौम्यैर्न दृष्टाः ॥सौम्या वा पापखेटा दिनकरसहिताः कीर्तिता नीलकण्ठे-

दीना हीना विहीना विमलफलहरास्तेपि जीर्णा मलीनाः ॥ ४८ ॥

अर्थ–सौम्य (शुभ) ग्रह वा पाप ग्रह उच्च राशिपर स्थित हों वा मित्रके राशिपर स्थित हों और सकल बल अर्थात् स्थान दिक्चेष्टा काल नैसर्गिक दृष्टि बलसे युक्त होकर भानु (सूर्य) से हीन होवे तौ अतिपुष्ट होते हैं और यदि वे शुभ ग्रह वा पाप ग्रह न तौ उच्च हो और न अपने राशिमें स्थित हों और न अपने मित्रके गृहमें स्थित हों और न मित्र वा शुभ ग्रहोंने देखे हों और सूर्यके सहित हों तौ वह ग्रह नीलकंठादिकोंने दीन तथा हीन और अतीव निर्बली और विफल फलके हरनेवाले अतिजीर्ण तथा मलीन कहे हैं ॥ ४८ ॥

इसके अनन्तर ग्रहोंकी शुभाशुभता कहते हैं एक श्लोककर।

लोके वेदे प्रसिद्धाः सकलफलहरा नीचगाः पापखेटाः स्वोच्चा नैव प्रशस्ता विमलफलहरा रंध्ररिःफारियुक्ताः ॥ जीवः स्वस्थान-

हन्ता वदति मुनिवरो दृष्टिरस्य प्रशस्ता
सौरिः स्वस्थानपालः परमभयकरी दृष्टिर-
स्य प्रणष्टा ॥ ४६ ॥

अर्थ—लोक और वेदमें प्रसिद्ध है कि पाप ग्रह नीच राशिपर स्थित होकर सकल उत्तम फलके हरनेवाले होते हैं और वेही पाप ग्रह अपने उच्चके होकरभी रन्ध्र (अष्टम) और रिःफ (द्वादश) और अरि (षष्ठ) भावमें युक्त हुए शुभ नहीं होते हैं किन्तु निर्मल फलके हरनेवाले होते हैं और जीव (बृहस्पति) अपने स्थानके नाश करनेवाला होता है और इस बृहस्पतिकी दृष्टि उत्तम होवे है और सौरि (शनि) अपने स्थानकी रक्षा करनेवाला होता है और इस शनिकी दृष्टि परम भयके करनेवाली तथा अतिनष्ट होवे है ॥ ४६ ॥

इसके अनन्तर दारिद्र योग तथा उसका फल कहते हैं।

रन्ध्रे रिःफे च पापा धनसुतनवमे सर्वकेन्द्रेषु
पापा ध्वान्ता ध्वंसिप्रध्वस्ता धनसुखनि-

धिपाश्चंद्रकर्मायपालाः ॥ योगो दारिद्र्यसंज्ञो वदति जलजजो यस्य संजातकाले राज्ये वंशेपि जातो भवति स पुरुषः कर्म्महीनो दरिद्रः ॥ ४७ ॥

अर्थ—रन्ध्र (अष्टम) और रिःफ (द्वादश) गृहमें पाप ग्रह हों और धन (द्वितीय) और सुत (पंचम) और नवम और समस्त केंद्र अर्थात् लग्न चतुर्थ सप्तम दशम भावमेंभी पाप ग्रह होवें और धन (द्वितीय) तथा सुख (चतुर्थ) और निधि (नवम) इन भावोंके स्वामी तथा चंद्र (प्रथम) और कर्म्म (दशम) और आय (एकादश) भावके स्वामी ध्वान्तध्वंसि (सूर्य) कर अस्त किये हुए हों तो यह दारिद्र्यसंज्ञक योग होता है ।जिसके जन्मसमय यह योग होवे तो वह पुरुष राजवंशमेंभी उत्पन्न होकर कर्म्महीन तथा दारिद्र्ययुक्त होता है ऐसा जलजज (ब्रह्मा) कहते हैं ॥ ४७ ॥

इसके अनन्तर शुभयोगज्ञान कहते हैं।

रन्ध्रे रिःफे रिपुस्थास्तनुधनसुखपा धर्म्म-

कर्म्मायनाथाः सन्धिस्था वा तनुस्था दिनकरसहिता वैरिवर्गेषु युक्ताः ॥ कोणे केन्द्रेपि सौम्याः सहजभवगताः पापखेटा बलस्थास्ते सर्वे दग्धदर्पा विमलफलकराः कालरुद्रा भवन्ति ॥ ४८ ॥

अर्थ—तनु (लग्न) और धन (द्वितीय) और सुख (चतुर्थ) भावके स्वामी और धर्म्म (नवम) और कर्म (दशम) और आय (एकादश) भावके स्वामी रंध्र (अष्टम) और रिःफ (द्वादश)और अरि (षष्ठ) भावमें स्थित होवे वा सन्धिमें स्थित हों वा तनु (मूर्ति) में स्थित हों और स्वयं दिनकर (सूर्य) के सहित हुए वैरियोंके वर्ग (राश्यादिकों)में युक्त होवे और सौम्य (शुभ) ग्रह कोण (नवम पंचम) और केंद्र (लग्न चतुर्थ सप्तम दशम) भावमें बली होकर स्थित होवें और पाप ग्रह सहज (तृतीय) और भव (एकादश) भावमें बली होकर स्थित होवें तौ वह लग्न द्वितीय चतुर्थ नवम दशम एकादश भावके स्वामी दुष्ट स्थानोंमें स्थित होनेसे उत्पन्न किये दुष्ट फलसे निरहंकार

होकर उत्तम फलके करनेवाले होते हैं ऐसा कालरुद्र कहते हैं ॥ ४८ ॥

इसके अनन्तर अन्य क्षत्रियोंका राजयोग कहते हैं।

एकोपि भानुवृन्दो मृगपतिनिलये स्वोच्चराशौ गतो वा दुष्टे दर्पप्रगेहे दनुजदलहरे देवदेवो बलस्थः ॥ दुर्योगानां प्रहर्त्ता प्रचुरधनप्रदः सर्वकल्याणकर्त्ता भूपानां भाग्यभर्त्ता वदति मुनिवरो माण्डलीकं करोति ॥ ४९ ॥

अर्थ—एकही भानुवृन्द (सूर्य) मृगपति (सिंह) राशि वा अपने उच्चराशिपर स्थित होकर दुष्ट (षष्ठ) और दर्प (सप्तम) गृह और दनुजदलहर(दशम) भाव इनमेंसे किसी भावपर स्थित होवे और देवदेव (बृहस्पति) स्थान दिक् चेष्टा काल नैसर्गिक दृष्टिबलसे सम्पन्न होवे तौ दुर्योगोंके लाभ करनेवाला तथा अतीव धनके देनेवाला और समस्त बली हर्षके करनेवाला और भूप अर्थात् क्षत्रियोंके भाग्य-उनके पति करनेवाला होता है और उस मनुष्यको मण्डल-ऐ· ·रता है ऐसा मुनिवर कहते हैं ॥ ४९ ॥

इसके अनन्तर शूद्रोंका अन्यराजयोग कहते हैं ।

एकः सौम्योस्ति येषां धनसुखतनये धर्म्म-
कर्म्मायलग्ने शूद्राणां जन्मकाले रविरिपुस-
हितो मन्मथे कन्यकायाम् ॥ तेषां द्वारप्रदेशे
मणिमयशिबिकाः प्रौढतुंगास्तुरंगाः पारी-
न्द्रा दीर्घदंता वदति मुनिवरः सर्वदा सेवयन्ति ५०

अर्थ–जिन शूद्रोंके जन्मकालके विषैं एकही सौम्य(बुध) सूर्यके शत्रु शुक्र शनीके साथ होकर मन्मथ (मिथुन) वा कन्याराशिपर स्थित हुआ धन (द्वितीय) वा सुख (चतुर्थ) वा तनय (पंचम) (वा धर्म) नवम वा कर्म्म (दशम) वा आय (एकादश) वा लग्नके विषैं स्थित होवे तो उन शूद्रोंके दरवाजोंके विषैं मणियोंकी बनी पालकी और अतीव ऊंचे तुरंग (घोडा) और बडे २ दाँतोंवाले पारीन्द्र (हाथी) सदैवही सेवा करते रहते हैं ऐसा मुनिव[illegible]) ते हैं ॥ ५० ॥ [illegible]तो वह

इसके अनन्तर नारियोंका शुभयोगज्ञान कहते [illegible]

नारीणां जन्मकाले कुजशनितमसाः कोणके-

न्द्रेषु शस्ताश्चद्रस्तेषु प्रशस्तो बुधसितगुरवः सर्वभावेषु शस्ताः ॥ लग्नेशः कामभावे मदनगृहपतिर्लाभभावे बलस्थो लाभेशः पुत्रभावे वदति मुनिवरो वृद्धनाथा भवंति ॥ ५१ ॥

अर्थ—स्त्रियोंके जन्मकालके विषैं कुज (मंगल) और शनि और तमस (राहु) यह तीनों कोण (नवम पंचम) और केंद्र (लग्न चतुर्थ सप्तम दशम) भावोंमें स्थित होकर शुभ होते हैं और इन्हीं स्थानोंके विषैं चंद्रमा अतीव शुभ होता है और बुध तथा सित (शुक्र)और गुरु (बृहस्पति) सब भावोंमें शुभ होते हैं और जिन स्त्रियोंको जन्मसमयके लग्नका स्वामी काम(सप्तम)भावमें और मदन (सप्तम) भावका स्वामी लाभ (ग्यारहवें) भावमें और लाभ (ग्यारहवें) भावका स्वामी पुत्र (पंचम) भावमें बली होकर स्थित होवे तो वे स्त्रियाँ वृद्धनाथा अर्थात् उनके पति उनकी वृद्ध अवस्था पर्यन्त जीवित रहते हैं ऐसा मुनिवर कहते हैं ॥ ५१ ॥

जीवो वा भार्गवो वा परमबलयुतो कामभा
वेषु यासां कर्मेशो धर्म्मलाभे तनुसुखतन
कर्म्मकोशे बलस्थः॥तासां चंद्राननानां कम
लदलदृशां नायका रूपयुक्ता राजन्ते राज्य
लक्ष्मीर्मणिमयशिबिरे दासिभावे सदैव ॥ ५

अर्थ–जिन स्त्रियोंके जन्मसमय जीव (बृहस्पति
भार्गव (शुक्र) परम बलसे युक्त होकर काम (सप्तम)
के विषैं युक्त होवे और कर्मेश (दशमभावका स्वा
धर्म्म (नवम) वा लाभ (एकादश) वा तनु (लग्न) वा
(चतुर्थ) वा तनय (पंचम) वा कर्म्म (दशम) वा क
(द्वितीय) भावमें बलवान् होकर स्थित होवे तो उन च
न्द्रमाके समान मुख और कमलके समान नेत्रोंवाली स्त्रियोंके
रूपवान् स्वामी विराजमान होते हैं और उनके दासीभावमें
मणियोंसे जटित शिबिरोंके विषैं राज्यलक्ष्मी सदैवही विद्य-
मान रहती है ॥ ५२ ॥

स्त्रियोंके किस भावमें क्या विचारा जाता है यह कहते हैं ।

लग्ने शशांके च वपुर्विचिन्त्यं तयोः कलत्रे